ORIGINAL RESEARCH PAPER

Arts

KEY WORDS:

ब्रिटिश शासन व्यवस्था का भारतीय कृषि पर प्रभाव

डॉ. मनीता कौर विरदी

सहायक प्राध्यापक ;राजनीति विज्ञानद्ध शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला छिंदवाड़ा (म.प्र)

ABSTRACT

प्रारंभ में ईस्ट इण्ड्रिया कम्पनी एक व्यापारिक कम्पनी थी। धीरे –धीरे कम्पनी ने अपनी जड़ो को मजबूत बनाया तथा भारत को अपना उपनिवेश बना दिया। औपनिवेशिक काल से पूर्व भारतीय अर्थव्यवस्था कृषिजन्य थी। लेकिन अंग्रेजों ने यहां के परंपरागत कृषि ढांचे को नष्ट कर दिया और अपने फायदे के लिए भूराजस्व निर्धारण और संग्रहण के नये तरीके लागू किये गये। प्लासी के युद्ध के पश्चात् बंगाल की द्वैध शासन व्यवस्था को समाप्त कर फार्मिंग सिस्टम वसूली के लिए कीं। राजस्व का वार्षिक फार्मिंग सिस्टम का भूमि को लगान वसूली हेतु ठेके पर दिये जाने की प्रथा का कालांतर में बंगाल पर बुरा प्रभाव पड़ा, किसानों का शोषण बढ़ा और वे भुखमरी तक पहुंच गये। अंगेजों द्वारा कृषि के व्यवसायीकरण की नीति ने चीनी, चाय, कॉफी जूट जैसी नकदी फसलों को उगाने के लिए मजबूर किया गया जिससे भूमि की उर्वरता खराब हो गई और इस पर कोई अन्य फसल नहीं उगाई जा सकी। प्रस्तुत शोध पत्र में ब्रिटिश शासन व्यवस्था का भारतीय कृषि पर प्रभाव की विवेचना करने का एक छोटा प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना–

भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि की महत्वपूर्ण भूमिका है। कृषि हमारे आर्थिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक उन्नति का माध्यम रही है। भारत में लोग कृषि को एक उत्सव के रूप में मानते रहे है। भारतीय संस्कृति में पर्व–त्यौहार, रीति रिवाज, संस्कार, कर्मकांड़ आदि खेती से जुड़े हुए है। भारत में अग्रेंजो के आगमनकाल से ही जमींदारी प्रथा का उदय होने लगा। अंग्रेज शासको का विश्वास था कि वे भूमि के स्वामी हैं और कृषक उनकी प्रजा है इसलिए उन्होनें स्थायी तथा अस्थायी बंदोबस्त बड़े कृषकों तथा राजाओं और जमींदारों से किए। यद्यपि राजनीतिक औचित्य से प्रभावित होकर उन्होनें एक एक परगना हर कर वसूल करने वाले इजारेदार को पांच वर्ष के लिए पट्टे पर दे दिया। इस प्रकार जमींदारी प्रथा को अंगेजों ने मान्यता प्रदान की यद्पि आंरभ में उनका विचार कृषकों को उनके अधिकारों से वंचित करने का नहीं था। सन् 1786 ई. में लार्ड कार्नवालिस, वारेन हेस्टिंग्स के बाद गवर्नर जनरल हुआ। जार्ड कार्नवालिस भी जमींदारी प्रथा के पक्ष में था। उसने सन् 1790 ई. बंगाल, बिहार तथा उडीसा में दस वर्षीय बंदोबस्त की आज्ञा दी। दो वर्ष पश्चात् बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स ने इस दस वर्षीय योजना को स्थायी बंदोबस्त (permanent settlement) बना देने की अनुमति दे दी । मद्रास में जमींदारी प्रथा का उदय अंग्रेज शासको की नीति द्वारा हुआ। गांवों की भूमि का विभाजन कर उन्हें नीलाम कर दिया जाता था और अधिकतम मूल्य देने वाले को विक्रय कर दिया जाता था। प्रांरभ में अवध में बंदोबस्त कृषक से ही किया गया था। परन्तु तंदनतर राजनीतिक कारणों से यह बंदोबस्त जमींदारों से किया गया। इस प्रकार भारतवर्ष के इतिहास में इन बंदोबस्तों द्वारा राज्य और कृषके के बीच में जमींदारों का वर्ग अंगेजों की नीति द्वारा स्थापित हुआ जिसके फल स्वरूप कृषकों के भू–संपति अधिकार, जो अनादि काल से चलें आ रहे थे, छिन गये। इन बंदोबस्तों में कृषकों के हितों की और कोई ध्यान नहीं दिया गया था जिसके पविणामरूवरूप उनका दृख, अपमान एवं दरिद्रय दिन प्रतिदिन बढ़ता गया।

आंकड़ों का संकलन – द्वितीयक संमकों का संकलन, विषय से संबंधित पूर्व में किये गये प्रकाशित शोध ग्रंथों, पत्र–पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रों आदि के माध्यम से किया गया है। इसके अतिरिक्त इंटरनेट के माध्यम से भी तथ्य संकलित किये गए।

प्रविधिः प्रस्तुत शोध पत्र में ग्रंथालय अध्ययन पद्धति के साथ द्वंदात्मक, विश्लेषणात्मक अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण –

अंग्रेजों के अधीन भारतीय किसानों की हालत लगातार बिगड़ती गई। बिहार, बंगाल और उडीसा के दीवानों को प्राप्त करने के बाद, अंग्रेजों ने अलग–अलग भूमि राजस्व नीतियां पेश की। उनका अंतिम उद्देश्य भारतीय जमींदारों और किसानों से अधिकतम राजस्व का विनियोजन था। अंगेजों द्वारा कृषि के व्यवसायीकरण की नीति ने अफीम,चाय, कॉफी, चीनी, जूट, जैसी नकदी फसलों के बाजार उन्मुख उत्पादन को प्रोत्साहित किया। भारतीय किसानों को नकदी फसलों को उगाने के लिए मजबूर किया गया, जिससे भूमि की उर्वरता खराब हो गई और इस पर कोई अन्य फसल नहीं उगाई जा सकी।

रैय्यतवाड़ी प्रणाली :–

इस प्रणाली के तहत भूमि के प्रत्येक पंजीकृत धारक को भूमि के मालिक के रूप में मान्यता दी गई थी और राज्य को भूमि राजस्व के सीधे भुगतान के लिए जिम्मेदार ठहराया गया था। उसे अपनी भूमि जोतने, हस्तांतरित करने, गिरवी रखने या बेचने का अधिकार था। जब तक उन्होंने भू–राजस्व की राज्य की मांग का भुगतान नहीं किया, तब तक उन्हें सरकार द्वारा अपने पद से बेदखल नहीं किया गया था।

मद्रास प्रेसीडेंसी में, 1792 में कंपनी द्वारा इसके अधिग्रहण के बाद बारामहल जिले में पहली भूमि राजस्व बस्तियाँ बनाई गईं। कैप्टन रीड थॉमस मुनरो की सहायता से खेतों की अनुमानित उपज के 50: के आधार पर राज्य की मांग तय की, जो काम किया पूरे आर्थिक किराए से अधिक होना।

राज्य की मांग पैसे में तय की गई थी और इसका बाजार में वास्तविक उत्पादन या मौजूदा कीमतों से कोई संबंध नहीं था। 1855 में सकल उत्पादन के 30% के आधार पर एक व्यापक सर्वेक्षण और निपटान योजना तय की गई थी। वास्तविक कार्य 1861 में शुरू हुआ। बॉम्बे प्रेसीडेंसी में भी कंपनी ने जियोटवारी प्रणाली के पक्ष में निर्णय लिया, जिसमें जमींदारों या ग्राम समुदायों के उन्मूलन के लिए एक दृष्टिकोण था जो उनके मुनाफे को रोक सकता था। इस प्रकार बंबई और मद्रास प्रेसीडेंसी के प्रमुख हिस्सों में रयोटवारी बस्तियां बनाई गईं, असम और ब्रिटिश भारत के कुछ अन्य हिस्सों में लगभग 51% {ात्र को कवर किया गया।

महालवाड़ी प्रणाली :–

इस प्रणाली के तहत, राजस्व निपटान के लिए इकाई गांव या महल (यानी, संपत्ति) थी। गाँव की भूमि गाँव समुदाय के साथ संयुक्त रूप से तकनीकी रूप से श्सह–हिस्सेदारों के शरीर की थी, जो संयुक्त रूप से भू–राजस्व के भुगतान के लिए जिम्मेदार थे, हालांकि व्यक्तिगत जिम्मेदारी भी थी।

महलवारी का कार्यकाल यूपी के प्रमुख भागों, मध्य प्रांत पंजाब (विविधताओं के साथ) में शुरू किया गया था और इस क्षेत्र का लगभग 30: शामिल था। 1822 के विनियमन VII ने होल्ट मैकेंजी की सिफारिश को कानूनी मंजूरी दी, जिसने 1819 में उत्तर भारत में ग्राम समुदायों के अस्तित्व पर जोर देते हुए उनका मिनट रिकॉर्ड किया। उन्होंने भूमि का सर्वेक्षण करने, भूमि में अधिकारों का रिकॉर्ड तैयार करने, गांव या महल द्वारा भूमि राजस्व मांग गांव के निपटान और ग्राम प्रधान या लंबरदार के माध्यम से भूमि राजस्व का संग्रह करने की सिफारिश की।

इस प्रकार जमींदारों द्वारा देय किराए के मूल्य के 80% के आधार पर भू–राजस्व बस्तियाँ बनाई गईं। ऐसे मामलों में जहां सामान्य किरायेदारी में खेती करने वालों द्वारा सम्पदा रखी जाती थी, राज्य की मांग को किराये के 95% पर तय किया गया था। राज्य की अत्यधिक मांग और इसके कामकाज और भूमि राजस्व के संग्रह में कठोरता के कारण प्रणाली टूट गई।

ग्रामीण ऋण ग्रस्तता :–

उच्च राजस्व मांगों ने विनाश को जन्म दिया, क्योंकि इसने 19 वीं शताब्दी में गरीबी और कृषि की गिरावट को जन्म दिया। इसने किसान को मनी–लेंडर के चंगुल में फंसने के लिए मजबूर कर दिया। यदि किसान पैसा नहीं दे पाता तो उसकी जमीन बेच दी जाती। धीरे–धीरे अधिक भूमि साहूकारों, व्यापारियों, अमीर किसानों और अन्य धनवान वर्गों के हाथों में चली गई।

बढ़ते व्यावसायीकरण ने मनी–लेंडर सह व्यापारी को खेती करने वाले का फायदा उठाने में भी मदद की। किसान को फसल के बाद और जो भी कीमत

मिल सकती थी, वह सरकार, जमींदार और साहूकार की माँगों को पूरा करने के लिए उसे अपनी उपज बेचने के लिए मजबूर होना पड़ा। उपरोक्त कारकों में जोड़ा गया था, किसानों पर भारी जनसंख्या के दबाव का बढ़ना किसानों पर भारी पड़ा।

1793 ई. में कार्नवालिस ने भू–राजस्व प्रबंधन के लिए स्थायी बंदोबस्त को लागू किया। इसके द्वारा लागू किए गए भू–राजस्व सुधार के दो महत्वपूर्ण पहलू सामने आये :–

1.भूमि में निजी सम्पत्ति की अवधारणा को लागू करना, तथा
2.स्थायी बंदोबस्त

लॉर्ड कार्नवालिस की पद्धति में मध्यस्थों और बिचौलियों को भूमि का स्वामी घोषित कर दिया गया। दूसरी ओर, स्वतंत्र किसानों को अधीनस्थ रैय्यत के रूप में परिवर्तित कर दिया गया और सामुदायिक सम्पत्ति को जमींदारों के निजी स्वामित्व में रखा गया। भूमि को विक्रय योग्य बना दिया गया। जमींदारों को एक निश्चित तिथि को भू–राजस्व सरकार को अदा करना होता था। 1793 ई. के बंगाल रेग्युलेशन के आधार पर 1794 ई. में सूर्यास्त कानून (Sunset Law) लाया गया, जिसके अनुसार अगर एक निश्चित तिथि को सूर्यास्त होने तक जमींदार जिला कलेक्टर के पास भू–राजस्व की रकम जमा नहीं करता तो उसकी पूरी जमींदारी नीलाम हो जाती थी। इसके बाद 1799 और 1812 ई. के रेग्युलेशन के आधार पर किसानों को पूरी तरह जमींदारों के नियंत्रण में कर दिया गया, अर्थात प्रवधान किया गया कि यदि एक निश्चित तिथि को किसान जमींदार को भू–राजस्व की रकम अदा नहीं करते तो जमींदार उनकी चल और अचल दोनों प्रकार की सम्पत्ति का अधिग्रहण कर सकता है। इसका परिणाम हुआ कि भू–राजस्व कि रकम अधिकतम रूप में निर्धारित की गयीं तथा इसके लिए 1790 – 91 ई. के वर्ष को आधार वर्ष बनाया गया। निष्कर्षतः 1765 – 93 के बीच कंपनी ने बंगाल में भू–राजस्व की दर में दुगुनी बढ़ोतरी कर दी।

निष्कर्ष–

अतः कहा जा सकता है कि महालवारी व्यवस्था पूरी तरह असफल हुई क्योंकि इसमें लगान का निर्धारण अनुमान पर आधारित था और इसकी विसंगतियों का लाभ उठाकर कंपनी के अधिकारी अपनी जेब भरने लगें। कंपनी को लगान वसूली पर लगान से अधिक खर्च करना पड़ता था। इस व्यवस्था का परिणाम ग्रामीण समुदाय के विखंड़न के रूप में सामनें आया। सामाजिक दृष्टि से यह व्यवस्था विनाशकारी और आर्थिक दृष्टि से विफल सिद्ध हुई।

इस तरह 19 वीं सदी के मध्य तक कंपनी के प्रशासन ने भूमि में निजी संपति का सजृन करते हुए तीन अलग–अलग समुहों को मालिकाना अधिकार देते हुए मालगुजारी प्रशासन की तीन व्यवस्थाऐं पैदा की ,रैयत अर्थात् मालिक किसानों के साथ रैयतवाडी बदोबस्त किया गया और ग्राम समुदायों के साथ महलवारी बंदोबस्त किया गया। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कृषि के वाणिज्यिकीकरण से भारत में गरीबी बढ़ी, अकाल पड़े ,कुछ हद तक अर्थव्यवस्था का मौद्रिकरण हुआ, गांवों का शहर से संपर्क बढ़ा।

संदर्भ सूची

1. गुप्ता डॉ. मोहनलाल 'ब्रिटिष षासन में कृषि का वाणिज्यीकरण और उसका प्रभाव, षुभदा प्रकाषन ,जोधपुर, राजस्थान
2. गुप्ता डॉ. मोहनलाल 'ब्रिटिष षासन में कुटिर उद्योगों का पतन, षुभदा प्रकाषन ,जोधपुर, राज.
3. अरनोल्ड डेविड, औपनिवेषिक भारत में प्रोद्योगिकी और आयुर्विज्ञान, वाणी प्रकाषन नई दिल्ली
4. अग्निहोत्रि वी के, भारतीय इतिहास, एलाइड पब्लिषर्स,मुम्बई 2004
5. डॉ दीपाश्री 'भारत का आर्थिक विकास', न्यू सरस्वती हाउस,दरियागंज नई दिल्ली 2016
6. मिश्र जे.पी ' भारत में स्वाधीनता संघर्ष, पीर्यसन,2019
7. गुप्त मानिक लाल ,भारत का इतिहास, एंटलाटिक पब्लिषर्स नई दिल्ली 2003
8. https://www.indiaolddays.com
9. https://www.rajasthanhistory.com
10. https://www.historydiscussion.net
11. https://rajbhasha.gov.in
12. http://www.iasplanner.com